धरती कब तक घूमेगी

साँवर दइया

साँवर दइया राजस्थानी भाषा के एक प्रमुख कहानीकार हैं । उनकी कहानियों में राजस्थानी समाज गहरे अर्थबोध एवं विविध छटाओं के साथ उपस्थित हुआ है । प्रस्तुत कहानी 'समकालीन भारतीय साहित्य' (अप्रैल-जून 1983 ई०) से यहाँ साभार संकलित है । इस कहानी का राजस्थानी से हिंदी में अनुवाद कहानीकार ने स्वयं किया है ।

यह महीना समाप्त होने में दो-चार दिन और बाकी हैं । सीता ने सोचा और निःश्वास छोड़ी । कुछ याद आते ही उसका मन भर आया । भर आयीं आँखें पोंछकर उसने आकाश की ओर देखा । फिर जमीन खुरचने लगी । उसे महसूस हुआ कि पृथ्वी और आकाश के बीच घुटन भरी हुई है । ठीक वैसी ही घुटन, जैसी उसके हृदय में भरी है । सब कुछ है और कुछ भी नहीं है । भरा-पूरा घर है । बेटे-बहुएँ हैं । पोते-पोतियाँ हैं । दोहित-दोहितियाँ हैं । मिलने को दोनों वक्त रोटी भी मिलती है । लेकिन फिर भी पता नहीं सब कुछ अजीब-अजीब सा लगता है । लगता है कि कहीं कुछ कमी है जरूर । पकड़ में चाहे न भी आए । दोनों वक्त खाना और निश्चिन्त होकर सोना ही तो सब कुछ नहीं होता ! रोटी के अलावा भी आदमी की कुछ आवश्यकता हुआ करती है । अलावा वाली इच्छाएँ ही तो दुख भुगतने को बाध्य करती हैं ।

सीता अपना काला 'ओढ़ना' देखकर रुआँसी हो गयी । वे जीवित थे तबतक तो सबकुछ ठीक था । घर, घर ही प्रतीत होता था । आँगन में खेलते-झगड़ते बच्चों की चिल्ल-पौं कितनी सुखद प्रतीत हुआ करती थी ! उस चिल्ल-पौं में संगीत का-सा आनंद आता था । लेकिन अब तो बेचारे बच्चे भी चिल्ल-पौं नहीं मचाते । यदि कभी मचाते भी हैं तो उनका रिकॉर्ड बजने लगता है-कितनी दफा समझाया है कि वहाँ मत खेला कर । ग़ालियाँ सीखने के अलावा क्या है...किसी को बोलने का शऊर तो है ही नहीं....चाहे जैसे बोलते हैं नासपीटे !

सीता सोचती है कि इस घर को क्या हो गया । बच्चे यदि घर के आँगन में नहीं खेलेंगे तो फिर कौन-से पड़ोसियों के आँगन में खेलेंगे ! बच्चे तो घरवालों के साथ ही खेलेंगे । लेकिन नहीं । इन्हें तो घर के बच्चे फूटी आँखों नहीं सुहाते । अपने बच्चे ही प्यारे लगते हैं । उन्हें चौबीसों घण्टे खेलाएँगे-हँसाएँगे, कुदाएँगे-उछालेंगे । बार-बार चूमेंगे-पुचकारेंगे । लेकिन छोटे या बड़े भाई के बच्चों को देखते ही इन्हें उबकाई-सी आने लगती है । मुँह से चाहे कुछ भी न कहें, लेकिन आँखें तो सब कुछ बता ही देती हैं । खीर-पूड़ी खाते समय यदि नाली से उठकर कोई कुत्ता

थाली के पास आ जाए, उस समय जो क्रोध और घृणा – और पता नहीं क्या-क्या – जो भी आया करती है ना, बस वही सब कुछ इनके चेहरों पर अंकित रहता है ।

सीता अपने ही बारे में सोचने लगती है । वह कौन है ? कहने को तो इनकी माँ ही है, लेकिन माँ और बेटों के बीच जो आत्मीयता होती है, वह कहाँ है ? कोई घड़ी भर के लिए भी पास नहीं बैठता । क्या हालचाल है...तबीयत कैसी है....मन प्रसन्न है या नहीं...किसी वस्तु की आवश्यकता है या..। क्या पड़ी है इन्हें, ये क्यों पूछें ? दोनों वक्त खाना खिलाते हैं, यह कम है क्या ? लेकिन यह दोनों वक्त रोटी खिलाना भी खुशी-खुशी कहाँ है ! गले आ पड़ा फर्ज है यह तो ! अन्यथा उन तीनों में से इतना कमजोर कौन है जो मुझे अपने पास नहीं रख सकता...मेरा खर्च उठा नहीं सकता ? चाहिए ही क्या मुझे ? रोटी ये खाते हैं, रोटी मैं भी खाती हूँ । पाँच-सात व्यक्तियों के खाने के पीछे एक व्यक्ति का खाना तो ऐसे ही निकल आता है । नित्य नये पकवान माँगूँ वह बात तो है नहीं ! वे रूखी खाएँ तो मैं कौन-सी चुपड़ी हुई चाहती हूँ ! लेकिन अभी तो ये चुपड़ी खाएँ और मुझे रूखी डालें तब भी तो कुछ बोल नहीं सकती । बोलते ही तानों की बौछार तैयार है – हाँ, हाँ, हम तो भेद-भाव रखते हैं । हमें तो चिकनी-चुपड़ी पोसाती नहीं । गरीब आदमी हैं । मुश्किल से अपनी गुजर करते हैं । लेकिन अब जो आपको छप्पन-भोग खिला सकें, उनके पास चले जाओ । देखें, कितने दिन रोटी खिलाते हैं । वे अमीर हैं तो अपने घर होंगे । उनकी अमीरी हमारे किस काम आनेवाली । हमारे तो हमारी भूख ही काम आएगी !

सीता याद करती है कि वह दिन कितना बुरा था जब बड़े लड़के कैलास ने सुबह चाय पीते समय नारायण और बिज्जू को बुलाकर कहा कि माँ को रखने का ठेका सिर्फ उसी ने तो नहीं ले रखा है । तुम लोगों का भी तो कोई फर्ज होगा । तुमने कौन-सा घर से हिस्सा नहीं लिया ? तुम कौन-से माँ के बेटे नहीं हो ?

ABDIEL SOLUTIONS * PATNA *

उसकी बात सुनकर नारायण बोला, 'आप जैसा कहेंगे वैसा ही कर लेंगे...।'

'मैं क्या कहूँ ? तुम्हें कौन-सा दिखायी नहीं देता ?' कैलास के भीतर क्रोध का बवण्डर उठ रहा था ।

बिज्जू चुप रहा । वह हमेशा चुप रहता है । बस, सिर्फ देखता रहता है कि कौन क्या करता-कहता है ।

और सीता..? वह अर्द्धविक्षिप्त-सी देख रही थी । देखें, अब क्या होता है ? एक माँ.. तीन बेटे...दो वक्त की रोटी ।

तीन बेटे...दो वक्त की रोटी...एक माँ । एक माँ..तीन बेटे....रोटी..। और फिर बहस में घूमते माँ, बेटे और रोटी में सिर्फ रोटी ही महत्त्वपूर्ण रह गयी । माँ और बेटे कहीं दूर जा पड़े–गोफन में डालकर फेंके गए पत्थर की मानिंद ! रोटी का आकार और भार इतना बढ़ गया कि उसे सम्हालना किसी एक के सामर्थ्य की बात नहीं रही । फैसला–तीनों जने बारी-बारी से माँ को एक-एक महीने अपने साथ रखेंगे ।

सीता को कुछ कहने का मौका ही नहीं मिला । तीनों में से किसी ने यह नहीं पूछा कि यह फैसला उसे मंजूर है या नहीं । उसकी अपनी इच्छा क्या है ! उसने निःश्वास छोड़ा–खैर, कोई बात नहीं । यदि आज वे होते और यह तमाशा देखते तो क्या कहते ? उनसे यह सब कुछ सहन हो पाता ! वे तो लाल–पीले होकर गालियाँ निकालने लगते । थप्पड़ या लात मारते ऊपर से ! क्या समझ रखा है मुझे । मैं तुम्हारी इन दो रोटियों के भरोसे बैठा हूँ क्या ? अभी तो इतनी सामर्थ्य है कि तुम जैसे बीसों भिखारियों को रोटी डाल सकता हूँ । एक लम्बा निःश्वास । लेकिन उनके होते हुए कभी ऐसी बात उठी ही नहीं । उन्हें क्या खबर थी कि ये लोग दो वक्त की रोटी के लिए ऐसा करेंगे ।

❑

सीता को अच्छी तरह याद है कि वे फाल्गुन के दिन थे । तीन–चार दिनों बाद होली थी । यही तय हुआ कि होली के बाद माँ बारी–बारी से सभी के साथ रहेगी । 'नाहरसिंहजी वाले दिन' खाना खाते हुए उसे लगा कि 'लापसी' बिलकुल फीकी है । और निगलते समय लगता कि कौर गले में अटक रहा है । होली वाले दिन भी वह अनमनी और उदास थी । होली वाले दिन वैसे तो 'लापसी' ही बना करती है, लेकिन उस दिन कैलास की पत्नी ने दाल का हलुवा बनाया । भुनती हुई दाल देखकर उसे लगा कि वह भी भुनी जा रही है ?

बच्चे उसको कहने लगे, 'दादी माँ...दादी माँ, बाई (माँ) कह रही थी कि कल से आप नारायण चाचा के हिस्से में खाया करेंगी । दादी माँ, आप सचमुच वहीं खाना खाएँगी क्या ?' और शाम को जब वह खाना खाने बैठी तब कैलास की पत्नी राधा बोली, 'दाल का हलुवा आप ही के लिए बनाया है । खूब पेट भर खाना !'

वह सोचने लगी कि दाल का हलुवा हो या रूखी रोटी, खाने के लिए बैठने के बाद तो पेट का गड्ढा भरना ही पड़ता है ! रुचि हो तो दो कौर ज्यादा, अन्यथा चार कौर कम ! उसने सोचा – आज के बाद यहाँ से मेरी रवानगी । कल नारायण के हिस्से में खाना–पीना । फिर यहाँ के पानी में भी साझा नहीं रहेगा क्या ? बच्चों के पास आना–जाना भी बन्द हो जाएगा क्या ? नहीं, नहीं...यह बात नहीं हो सकती !

एक के बाद दूसरे और दूसरे के बाद तीसरे के हिस्से में वह लुढ़कने लगी । कैलास के हिस्से से नारायण के हिस्से में और नारायण के हिस्से से बिरजू के हिस्से में ! हिस्सा बदलते ही बच्चे हर्षित होकर उसके पास आते और कहते, 'दादीजी, कल से आप हमारे घर खाना खाएँगी । हम साथ–साथ ही खाएँगे – एक ही थाली में ? ठीक है ना दादीजी ?'

वह रुआँसी हो जाती । इन नासमझ बच्चों को भी पता चल गया है कि वह बारी–बारी से खाना खाती है । एक महीने से एक दिन भी अधिक नहीं रखता कोई । महीना होते ही टिकट कटवाओ । अब दो महीनों के लिए आफत टली – यही सोचते होंगे !

शाम होते ही बच्चे सरावगियों के 'पाटे' पर खेलते । वे जब कभी 'माई-माई रोटी दे' वाला खेल खेलते तब उसे महसूस होता कि यह कहानी आज भी शत-प्रतिशत सत्य है । बच्चों में से एक जना भिखारिन बनकर बारी-बारी से दूसरों के पास जाकर एक ही बात कहता, 'माई, माई रोटी दे...।' उसे उत्तर मिलता, 'यह घर छोड़, दूसरे घर जा !'

वह सोचती – बिलकुल यही स्थिति मेरी है । मैं भी इस भिखारिन जैसी हूँ । महीना होते ही बेटा कह देता है, 'माई यह घर छोड़, दूसरे घर जा !' और मैं रवाना हो जाती हूँ-आगे वाले घर के लिए । वहाँ भी महीना पूरा होते ही वही आदेश सुनायी देता है...'यह घर छोड़, दूसरे घर जा !'

यह घर छोड़कर दूसरे घर और वह दूसरा घर छोड़कर आगे वाले घर जाते-जाते पाँचेक वर्ष व्यतीत हो गए । ये पाँच वर्ष भी सुख-चैन से बीते हों, ऐसा कहाँ ! इन पाँच वर्षों में पच्चीसों दफा झगड़े हुए । बिज्जू के हिस्से में थी तब नारायण की पत्नी भँवरी ने लड़के के जन्मदिन पर कटोरी में डालकर रसमलाई भेजी । रसमलाई का एक ग्रास ही लिया था कि इतने में ऊपर से हल्ला सुनायी दिया । बिज्जू की पत्नी पुष्पा बोल रही थी, 'अरे, अपनी अमीरी दिखाने के लिए रसमलाई भेजी है क्या ! तुम्हारे हिस्से में थीं तब तो रूखी रोटियाँ खिलायी उन्हें । आज महारानी जी ने रसमलाई की धौंस दिखायी है । देखी तुम्हारी रईसी ! मेरे हिस्से में हो तब तुम अपना यह माल अपने ही पास रखना । हमारी जैसी सामर्थ्य होगी, हम खुद खिला देंगे । हुँह !' सीता को फिर याद आया – उन दिनों वह नारायण के हिस्से में थी राधा को बुखार आ गया था । कैलास नौकरी के किसी काम से बाहर गया था । उसने दो-तीन दिनों तक उसके बच्चों के लिए रोटी बनायी । कुछ दिनों बाद बच्चों के झगड़े को लेकर भँवरी और राधा के बीच भी झगड़ा हुआ । राधा ने कहा जब बच्चे झगड़ रहे थे तब सासजी वहीं थीं । चाहो तो उनसे पूछ लो । इतने में भँवरी ने जहर में बुझा तीर छोड़ा, 'अरे, जा-जा ! पूछ लिया तुमसे और उनसे-दोनों से । उनसे क्या पूछना है ? वे गुलामी करती फिरती हैं तुम्हारी और खाना खाती हैं मेरे हिस्से में ! गुलामी करवायी वह तो अच्छी बात है लेकिन खाना तो खिलाना था !'

उसकी आँखें भर आयीं । इनके लड़ाई-झगड़े का कोई अन्त नहीं है । ये हमेशा लड़ती हैं, लड़ाई है इनकी और काँटों में घसीटती हैं मुझे । अब मरना तो मेरे भी हाथ में नहीं है । हाथ में हो तो यही कर दिखाऊँ । भगवान ने जितनी साँसें लिखी हैं उतनी तो लेनी ही पड़ेंगी । सीता यही सोच-सोचकर रुआँसी-सी हुई जा रही थी ।

LABSOL PATNA

सीता को महसूस होने लगा कि आकाश अनन्त नहीं है । यह धरती लम्बी-चौड़ी नहीं है । यह सिकुड़ गयी है । घर भी सिकुड़ गया है । यहाँ सिर छिपाने के लिए भी जगह नहीं है । कहने को तो यह घर है । यह घर गली के लोगों की दृष्टि में अच्छा खाता-पीता घर है । लेकिन

यहाँ खाते-पीते घर में ही खाने-पीने को लेकर झगड़ा है । एक पेट के लिए इतने झंझट ! ये लोग सुबह-शाम गाय-कुत्ते को भी तो रोटी डालते हैं । फिर मेरी रोटी में ऐसा क्या है कि इन लोगों को हमेशा नये ढंग से सोचना पड़ता है ।

❑

आज तो हद हुई !

कैलास ने कहा, 'यह बात अच्छी नहीं लगती कि माँ महीने इधर-उधर लुढ़कती रहे । मेरे खयाल से यह ठीक रहेगा कि हम तीनों ही माँ को पचास-पचास रुपये हर महीने दे दिया करें । माँ के लिए डेढ़ सौ रुपए काफी हैं । चाय तो हम पिलाते ही हैं । आगे भी पिलाते रहेंगे । बाकी रही रोटी, वह अपनी पकायेगी-खायेगी..!'

नारायण ने कहा, 'जैसी आपकी मर्जी । मुझे तो मंजूर है ।' आज तो बिज्जू भी चुप नहीं रहा । बोला, 'इधर-उधर लुढ़कने से तो अच्छा ही है. । अपनी जगह पड़ी तो रहेगी !'

इतनी बात होने के बाद कमरे में मौन के तीक्ष्ण कीलों का खेत उग आया । इधर-उधर हिलते ही कीलें चुभतीं । सभी यथावत् बैठे रहे । थोड़ी देर बात कीलें ठुका स्वर शुरू हुआ, 'माँ को पूछ तो लेते...।' यह बिज्जू की आवाज थी ।

'माँ आजकल किसी बात के लिए ना नहीं कहतीं । उसकी बला से कुछ भी हो चाहे । मूल बात तो अपने जचने की है ।'

जब सीता ने यह सुना तब वह कुछ नहीं बोली । बारी-बारी से तीनों बेटों की ओर निहारने लगी । उसकी आँखों के आगे अँधेरा-सा छा गया । मगर रोने की आवाज होठों से बाहर नहीं निकली । हृदय का एक टुकड़ा रो रहा था । उसके भीतर आँसुओं का समुद्र भर गया ।

सीता सोचने लगी कि यहाँ रोटी खाती हूँ तो कौन-सी मुफ्त की खाती हूँ । इनके बच्चों की देखभाल करती हूँ । जैसे बन पड़ते हैं, दो-चार बर्तन भी साफ करती हूँ । कौन-से हाथ घिसते हैं मेरे ! लेकिन ये पचास-पचास रुपये इस काम की मजदूरी दे रहे हैं क्या ? जब मुझे मजदूरी ही करनी है तो कहीं भी कर लूँगी । दुनिया में काम की कौन-सी कमी है ? और नहीं तो किसी के घर बर्तन-भाण्डे ही साफ कर रोटी खा लूँगी । सवाल तो रोटी का ही है ।

❑

अगले दिन सीता ने अपने दो-चार 'पूर-पल्लों' की गठरी बाँधी और अँधेरे-अँधेरे ही घर से निकल गयी । इस समय उसकी आँखों के आगे न तो अँधेरा था और न ही उसे धरती और आकाश के बीच घुटन हुई ।

आज आकाश अनन्त था । धरती बहुत ही बड़ी थी । वह रास्ता बहुत ही चौड़ा था, जिस पर वह रवाना हुई थी । और सबसे बड़ी बात यह थी कि उसके चारों ओर खुली हवा थी !

❑❑❑

बोध और अभ्यास

1. सीता अपने ही घर में क्यों घुटन महसूस करती है ?
2. पाली बदलने पर अपने घर दादी माँ के खाने को लेकर बच्चे खुश होते हैं जबकि उनके माता-पिता नाखुश । बच्चे की खुशी और माता-पिता की नाखुशी के कारणों पर विचार करें ।
3. 'इस समय उसकी आँखों के आगे न तो अँधेरा था और न ही उसे धरती और आकाश के बीच घुटन हुई ।' – सप्रसंग व्याख्या करें ।
4. सीता का चरित्र चित्रण करें ।
5. कहानी के शीर्षक की सार्थकता स्पष्ट करें ।
6. कहानी का सारांश प्रस्तुत करें ।

xxxxxxxx

ABDIEL SOLUTIONS ABSOL PATNA

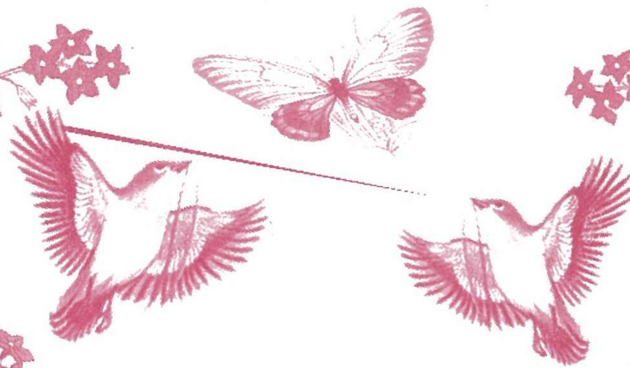

वन्दे मातरम्

सुजलां सुफलां मलयजशीतलाम्
शस्य-श्यामलां मातरम्।
वन्दे मातरम्।।
शुभ्र-ज्योत्स्ना-पुलकित-यामिनीम्
फुल्ल-कुसुमित-द्रुमदल-शोभिनीम्
सुहासिनीं, सुमधुरभाषिणीम्
सुखदां, वरदां, मातरम्।
वन्दे मातरम्।।

राष्ट्र-गान

जन-गण-मन-अधिनायक जय हे,
भारत - भाग्य - विधाता।
पंजाब सिंध गुजरात मराठा,
द्राविड़ - उत्कल - बंग।
विंध्य - हिमाचल - यमुना-गंगा,
उच्छल - जलधि - तरंग।
तव शुभ नामे जागे,
तव शुभ आशिष मागे
गाहे तव जय गाथा।
जन-गण-मंगलदायक जय हे,
भारत - भाग्य - विधाता।
जय हे, जय हे, जय हे,
जय जय जय जय हे।

ABDIEL SOLUTIONS ABSOL PATNA

बिहार स्टेट टेक्स्टबुक पब्लिशिंग कॉरपोरेशन लिमिटेड, बुद्ध मार्ग, पटना-1
BIHAR STATE TEXTBOOK PUBLISHING CORPORATION LTD., BUDH MARG, PATNA-1

मुद्रण : बब्लू बाईंडिंग हाउस, पटना कोल्ड स्टोरेज, पटना-6 द्वारा मुद्रित ।